साहित्यसुधा
साहित्यकारों की वेबपत्रिका
साहित्यकारों की रचना स्थली
वर्ष: 3, अंक 48, नवम्बर(प्रथम) , 2018

पुस्तक-समीक्षा:

# गाँव का मसीहा : एक सफल आंचलिक उपन्यास

राजेन्द्र वर्मा

'गाँव का मसीहा' डॉ. चिरोंजीलाल यादव का सद्य प्रकाशित सामाजिक और राजनैतिक उपन्यास है। इससे पूर्व उनकी दो काव्यकृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं तथा अनेक पत्र-पत्रिकाओं में उसकी रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं। अतः हिन्दी साहित्यिक संसार के लिए उनका नाम नया नहीं है।

प्रस्तुत उपन्यास नायक-प्रधान है। कृष्णावतार उसका नायक है। वह ग्रामवासी है तथा ग्रामीणों के कल्याण और उनके उत्थान का स्वप्न देखता है। उसका जीवन लोक-कल्याण को समप्रित है। निर्धन कृषक परिवार में जन्मने के कारण वह संघर्षपूर्ण जीवन जीता है- चाहे पढ़ाई का मामला हो, अथवा रहन-सहन का, लेकिन अपने अध्यवसाय से वह उच्च शिक्षा प्राप्त कर पी.एचडी. करता है। वह ईशभक्त है और आध्यात्मिक विचारों में गहरी आस्था रखते हुए वह एक आदर्श जीवन जीता है। पेशे से वह शिक्षक है और उसकी छन्दोबद्ध काव्य-रचना में रुचि है। इस कारण उसके हृदयोद्गार पाठक के सामने प्रभावी ढंग से आ जाते हैं। कविता के माध्यम से वह जनता की पीड़ा व्यक्त करने में सफल है। नायक अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन से प्रेरणा पाकर जीवन में शिक्षित बनने का संकल्प लेता है। शिक्षा मनुष्य के आत्मबल को जगाती है और जीवन के उद्देश्य को स्पष्ट करती है, उसके विकास के मार्ग को खोलती है। इस विषय में उपन्यासकार के विचार द्रष्टव्य हैं : *यदि मनुष्य एक हाथ से अपना पेट भरे तथा दूसरे हाथ से विकास के मार्ग में लगे काँटों को साफ़ करे तो वह अपने जीवन में निश्चित रूप से निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। यदि उसने अपने दोनों हाथ पेट भरने में लगा दिए तो उसके जीवन का विकास अवरुद्ध हो जायेगा। (पृ.34)*

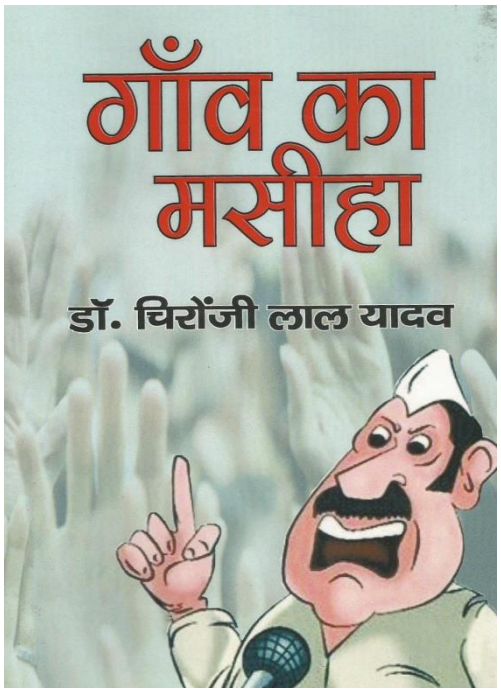


नायक जनता की सेवा का लक्ष्य लेकर ग्राम प्रधान का चुनाव जीतता है और पूरे पाँच वर्षों तक गाँव का विकास करता है। आगे चलकर वह प्रधान का चुनाव स्वयं न लड़कर अपने घरवालों को लड़ाता है और पांच चुनावों में दो बार उसके घर के सदस्य प्रधान बनते हैं, पर वह स्वयं ही अप्रत्यक्ष रूप में प्रधानी करता है। गाँव के लोग और यहाँ तक कि पंचायत सेक्रेटरी भी उसे ही प्रधान मानकर व्यवहार करते हैं। वह दो बार क्षेत्र पंचायत सदस्य का भी चुनाव लड़ता है और एक बार जीतता भी है। वह ब्लाक प्रमुख और जिला पंचायत सदस्य का भी चुनाव लड़ता है, लेकिन असफल रहता है। इन चुनावों में संलिप्तता के चलते वह राजनीति के चरित्र को रेशा-रेशा पहचानता है और उसका वर्णन उपन्यास में बखूबी करता है।

उपन्यास का उद्देश्य जीवन की आलोचना के साथ-साथ सामजिक अन्याय, शोषण, गरीबी, राजनैतिक भ्रष्टाचार आदि को मिटाकर एक स्वस्थ समाज की स्थापना करना है। उपन्यासकार विभिन्न पात्रों से वांछित परिवेश का निर्माण करता है और अनेक सामजिक अच्छाइयों और बुराइयों को प्रगट करता है। समस्या की तह तक जाने में वह गरीबों के

प्रति अमीरों के घृणित विचार भी सामने लाता है। उसके यहाँ दलित विमर्श की सही रूपरेखा है। उसके अपने उच्च विचार जो स्वगत कथन के रूप में है, उपन्यास के पाठ को गरिमा प्रदान करते हैं।

सिद्धान्ततः उपन्यास वास्तविक घटनाओं का काल्पनिक वर्णन होता है। इस दृष्टि से उपन्यासकार को अपेक्षित सफलता मिली है। त्रिस्तरीय पंचायत चुनाव (ग्राम प्रधान, ब्लाक प्रमुख और जिला पंचायत प्रमुख) ग्रामीण राजनीति में क्या और कैसे भूमिका निभाते हैं और वे कैसे ग्रामीण समाज की आर्थिक धुरी बने हुए हैं, इन बातों में उपन्यास में बहुत ही विश्वसनीय ढंग से प्रस्तुत किया गया है। यदि यह कहा जाए कि दो सौ अस्सी पृष्ठ के उपन्यास का ताना-बाना त्रिस्तरीय चुनाव को लेकर ही बुना गया है, तो अतिशयोक्ति न होगी। इन चुनावों की तकनीक भी विमर्श के दायरे में है। वर्ष 1995 से लेकर 2015 तक के त्रिस्तरीय चुनावों के विस्तृत वर्णन उपन्यास के मूल ढाँचे में हैं। विभिन्न तिथियों से बद्ध घटनाक्रम कथा को प्रमाणिक बनाता है।

उपन्यास में पात्रों की भूमिका का स्वाभाविक लगना उपन्यास की पहली शर्त है। इस लिहाज से उपन्यासकार ने पात्रों के नाम उनके चरित्रों के अनुरूप रखे हैं, जैसे- कृष्णावतार (नायक), भावना (पत्नी), रामानंद (पिता), भू देवी (माता), धनपाल (धनलोलुप अग्रज), लल्लू राम (मूर्ख अनुज), कर्कशी देवी (अनुज वधु, जो कर्कशा है), जालिम सिंह (पूर्व प्रधान जो विकास कार्यों का धन हड़पकर ग्रामीणों पर जुल्म ढाता है) आदि।

उपन्यास में आंचलिकता का इतना सटीक वर्णन है कि वह आंचलिक उपन्यास की श्रेणी में गिने जाने योग्य है। उसमें अन्य वर्णनों के अलावा हाथ से चारा काटने की मशीन और रहट का बहुत ही रोचक चित्र खींचा गया है। इस चित्रण से उन पाठकों को भी इनके बारे में पर्याप्त जानकारी मिलेगी जिन्होंने मशीन और रहट देखी नहीं है।) वसन्त ऋतु और ओला-वृष्टि का वर्णन भी बहुत सजीव है। एक दृश्य देखें : *फाल्गुन मास के अन्त में वसन्त अपने पूरे शवाब पर था। अमराइयों से आने वाली वायु सभी के मन को प्रसन्नचित्त कर रही थी। कोयल की कुहू-कुहू की आवाज़ सभी प्राणियों के मन-मस्तिष्क को अनायास ही अपनी तरफ़ आकर्षित कर रही थी। प्रकृति के गोद में मधु ऋतु ने अपनी सारी खुशियाँ उड़ेल दी थीं और प्रकृति का हर एक कण वसन्त ऋतु का स्वागत करने के लिए अति आतुर था।...(पृ.20)*

उपन्यासकार ने राजनीति के चरित्र का अनेक स्थलों पर खुलासा किया है। एक स्थल पर वह कहता है : *राजनीति में कोई भी स्थाई दुश्मन नहीं होता है। xxxx राजनीति के रास्ते पर चलाना बहुत ही कठिन है। इस रास्ते पर हर जगह सिर्फ काँटे-ही-काँटे हैं। इस रास्ते पर बहुत ही सोच-समझ कर चलने की ज़रूरत है अन्यथा नेता की भी वह दशा हो जाती है कि धोबी का कुत्ता, न घर का न घाट का।...(पृ.158)* नायक के अनुभवों के माध्यम से वह इंगित करता है कि जहाँ नेता का चरित्र दोगला है, वहीं वोटर भी कम नहीं। धन के बदले वे अपना वोट बेच देते हैं। नेताओं में आपसी वैमनस्य को वह इस प्रकार रेखांकित करता है : *जिस प्रकार से बरगद के पेड़ के नीचे कोई दूसरा पेड़ नहीं पनप सकता, उसी प्रकार से बड़ा नेता भी कभी छोटे नेता को पनपने नहीं देता है। (पृ.143)* स्वार्थी जनता के चरित्र पर भी वह उँगली रखने से नहीं चूकता : *किसी राजनेता ने चाहे किसी व्यक्ति को भले ही लाखों रुपयों का लाभ पहुँचाया हो, परन्तु अदि उस व्यक्ति को यह ज्ञात हो जाए कि ये नेताजी चुनाव में पराजित होने की स्थिति में हैं, तो वह वह व्यक्ति तुरंत ही जीतने वाले प्रत्याशी की गोद में जाकर बैठ जाता है। (पृ.157) xxxx नेता अपनी चाल चलता है तो जनता स चाल को काटने में लग जाती है। वह कभी किसी नेता को अपने मत का आश्वासन देती है तो कभी किसी दूसरे नेता को। xxxx आज के भौतिकवादी युग में बहुत से मतदाता प्रयाशी से धन लेकर भी अपने-अपने मत देने लगे हैं। फिर लोगों के द्वारा कहा जाता है कि विधायक हमारा काम नहीं करता। जब वोट उसे पैसे से मिलेंगे, तो फिर क्यों करेगा वह जनता का काम! (पृ.175)* उपन्यासकार आज की राजनीति पर टिप्पणी करते हुए पाठक को आगाह करता है : *राजनीति की परिभाषा भी अब बदलती जा रही है... पूरे पाँच वर्षों तक जनता को लूटो और पाँच वर्षों के बाद जनता की झोली में थोड़ी-सी धन-वर्षा*

*कर दो... जनता अपने-अपने मतों को बिना यह देखे हुए कि राजनेता अच्छा है या बुरा, अपना मत दे देती है... हमारे समाज में लगातार बढती हुई अराजकता सामाजिक व्यवस्था को ध्वस्त करने के लिए खतरे की घंटी है। (पृ.250)*

एक सफल उपन्यास में सामयिक घटनाओं का उल्लेख भी आवश्यक होता है, क्योंकि वे घटनाएँ किसी-न-किसी रूप में उपन्यास के पात्रों पर अपना प्रभाव डालती हैं, जो उपन्यास का आवश्यक अंग बन जाती हैं। इस दृष्टि से भी उपन्यास में न केवल प्रदेश की सामयिक राजनैतिक घटनाओं का समावेश किया गया है, बल्कि उन्हें पात्रों पर प्रभाव डालते हुए भी दिखाया गया है।

यों, संघर्षशील नायक किसी भी परिस्थिति में हार नहीं मानता, तथापि एक बार उसका जनसेवा और जनता से मोहभंग हो जाता है और वह शिक्षण और साहित्यिक गतिविधियों में संलग्न हो जाता है, पर थोड़े ही दिनों में उसकी ग्रामीणों की दुर्दशा दूर करने की साध उसे चैन नहीं लेने देती और वह पुनः गाँव की राजनीति में सक्रिय हो जाता है।

नायक के उच्च विचार उपन्यास के प्राण हैं। मनुष्य का धर्म क्या है, उसकी अधोगति के क्या कारण है, उसके जीवन का लक्ष्य क्या है? आदि तमाम बातों पर अनेक स्थलों पर विचार किया गया है। वह कहता है : *मनुष्य के लिए सबसे बड़ा धर्म-पालन क्या है?... अपने कर्त्तव्य के प्रति समर्पण। वही मनुष्य सबसे बड़ा धर्मात्मा है जो अपने कर्त्तव्य के प्रति पूर्णरूपेण समर्पित है। (पृ.37)* समय के सदुपयोग पर नायक के विचार कितने ग्राह्य हैं : *मनुष्य का जीवन बहुत छोटा है... यदि उसने अपने जीबन का एक भी पल व्यर्थ में बर्बाद किया तो उसका जीवन में कहीं भी ठिकाना लगने वाला नहीं!... इसलिए मनुष्य को हर पल किसी-न-किसी काम में लगा रहना चाहिए ताकि वह अपना और समाज का कल्याण कर सके। (पृ.19)* बुराई मिटाने को लेकर वह एक स्थल पर कहता है : *हर व्यक्ति यदि यही सोचता रहेगा कि बुरे लोगों का सामना कौन करे तो फिर हमारे समाज में इंसानों का रहना मुश्किल हो जाएगा। xxxx हमें इस संसार में किसीभी व्यक्ति से भयभीत होने की ज़रूरत नहीं है। हमें तो उस परमपिता पर विश्वास बनाये रखने की ज़रूरत है। यदि हम भगवान् पर विश्वास रखने वाले हैं, तो भगवान् हमारा संकल्प भी ज़रूर पूरा करेंगे। (पृ.200)* और इसी संकल्प के दम पर वह पूर्व प्रधान जालिम सिंह और भ्रष्ट ठेकेदार मटरूमल से लोहा लेने में सफल भी होता है। उपन्यास की समाप्ति पर भी वह अपने संकल्प के साथ किसी कर्मयोगी की भाँति खड़ा है।

यद्यपि उपन्यास अपने उद्देश्य में सफल है, लेकिन वह कुछ स्वाभाविक प्रश्नों को संज्ञान में नहीं लेता, जैसे- सक्रिय राजनीति में अधिकाधिक समय देने के कारण नायक स्कूल की शिक्षण सम्बन्धी गतिविधियाँ कैसे सँभालता था? नामांकन के दौरान कृष्णावतार के काग़ज़ कोई अन्य व्यक्ति कैसे प्रयुक्त कर सकता है, जैसा कि पृष्ठ 137 पर वर्णित है।... चुनावों के दौरान असलहों का प्रयोग प्रतिबन्धित रहता है, जबकि पृष्ठ 144 पर कृष्णावतार द्वारा एक बी.डी.सी. महिला की सुरक्षा में राइफल का उपयोग दिखाया गया है। कई स्थलों पर फ़र्ज़ी मतदान करने की बात कही गयी है, जबकि चुनाव में वोट वही डाल सकता है जिसका नाम वोटर लिस्ट में हो और उसके पास निर्वाचन आयोग द्वारा जारी वोटर कार्ड हो। हाँ, अगर वोटर लिस्ट में नाम फर्जी हैं और उनके हिसाब से वोटर कार्ड बने हों तो और बात है, लेकिन आजकल ऐसा होना सामान्यतः संभव नहीं। इस प्रसंग में विशेष विवरण उपन्यास में नहीं मिलता, जिससे इन आरोपों की पुष्टि हो सके।...उपन्यास में त्रिस्तरीय चुनाओं के अलावा अन्य सामाजिक और राजनैतिक परिदृश्य ग़ायब हैं। बाबरी मस्जिद, गोधरा काण्ड जैसे मुद्दों को कोई स्थान नहीं मिला है, जबकि उसका कथानक पूरी तरह से राजनैतिक है। उपन्यास में राजनीति के चरित्र, नेताओं और वोटरों के चरित्र और परिजनों की लोलुपता आदि के विवरणों में बहुत दुहराव है, जो उबाऊ लगने लगता है।

एक स्थल पर यह विवरण आता है कि जब नायक मजदूरी करने दिल्ली जाता है, तो कश्मीरी गेट के बस स्टैंड पर एक रेस्टोरेंट में वह 29/- रुपये में तीन आलू और एक गिलास छाछ लेता है; यह विश्वसनीय नहीं लगता। इन पंक्तियों

के लेखक ने स्वयं वर्ष 2012 में उसी बस स्टैंड के एक रेस्टोरेंट में चाय-समोसा लिया जिसका बिल सामान्य ही था- कोई पन्द्रह रुपये के आस-पास।... एक स्थल पर साँप का मन्त्र गाते हुए दिखाया गया है, पर जहाँ तक मेरी जानकारी है, वह पीड़ित के कान में फूँका जाता है। पीड़ित को जगाये रखने के लिए अन्य लोग उसे आवाज़ देते या गाते-बजाते रह सकते हैं।

घोर उपेक्षा के बावज़ूद नायक कर्कशी देवी अथवा लल्लूराम को प्रधान बनवाने का लोभ संवरण नहीं कर पाता। उसका यह उद्यम अस्वाभाविक लगता है। उपन्यास में कर्कशी और लल्लूराम के जिस उपेक्षित व्यवहार का वर्णन है, उसे देखते हुए कृष्णावतार जैसे स्वाभिमानी व्यक्ति या तो स्वयं चुनाव लड़ने का निर्णय लेगा अथवा, वह रणक्षेत्र से हट जाएगा, लेकिन कृष्णावतार में इस बात को लेकर किसी प्रकार का अन्तर्द्वन्द्व नहीं दिखाया गया है।

भाषा की दृष्टि से उपन्यास में, सपाटबयानी अधिक है, रोचकता का अभाव लगता है। वाक्यों की संरचना बहुत ढीली-ढाली है। व्यंग्य, वक्रोक्ति का सहारा न के बराबर लिया गया है। नायक के स्वगत कथन में ईश्वर की इच्छा, दर्शन आदि की अधिक स्थान दिया गया है। रचना में पात्र कम, उपन्यासकार अधिक बोलता है। शब्द-प्रयोग में भी कहीं-कहीं चूक दिखायी देती है। 'काग़ज़ात' की जगह 'पत्राजात' प्रयुक्त है (पृ.207) उर्दू में 'काग़ज़' का बहुवचन 'काग़ज़ात' होता है, पर हिन्दी में यह पत्र-व्यवहार है। 'पत्राजात' किसी प्रकार सही नहीं है। हाँ, यदि इसे कोई पात्र प्रयुक्त करता तो और बात थी, लेकिन यहाँ तो नरेटर बोल रहा है। इसी प्रकार पृष्ठ 259 पर 'दैन्य' शब्द को 'दैन्यता' के रूप में प्रयुक्त किया गया है।... 'जीतपुर जमौरी' तथा 'कृष्णावतार' शब्द लगभग हर पैरे में आया है। आख़िर सर्वनाम भी कोई चीज़ है! बल्कि, सम्बोधनों में 'कृष्णा, कृष्णा जी, किशना, किशन भैया' आदि का प्रयोग संवादों को अधिक स्वाभाविक बना देता। वैसे भी गाँवों में 'कृष्ण' को 'किशन' ही अधिक कहा जाता है।

निष्कर्षतः उपन्यासकार आंचलिकता को राजनीति के दर्पण में देखनेवाला अद्भुत रचनाकार बन गया है और वह प्रेमचंद, रेणु, रांगेय राघव आदि की श्रेणी में स्थान पाने का अधिकारी प्रतीत होता है। उपन्यास की छपाई साफ़-सुथरी है। कवर आकर्षक है, यद्यपि उसमें कला का वह समावेश नहीं है जो आजकल प्रचलन में है। यद्यपि रचनाकार का यह पहला उपन्यास है, तथापि अपनी नवीन विषयवस्तु और सरल भाषा के कारण यह उपन्यास सफल उपन्यासों की श्रेणी में गिना जायेगा।

| पुस्तक-विवरण | |
|---|---|
| पुस्तक का नाम | गाँव का मसीहा (उपन्यास) |
| उपन्यासकार | डॉ. चिरोंजीलाल यादव (मो.9719 125659) |
| प्रकाशक | पराग बुक्स. ए-15, जी-2 श्याम पार्क एक्स, साहिबाबाद, ग़ाज़ियाबाद-201 005 (मो. 9818 197222, 9911 379368) |
| संस्करण | प्रथम, 2018 |
| पृष्ठ संख्या, मूल्य | 280, रु.700/- |